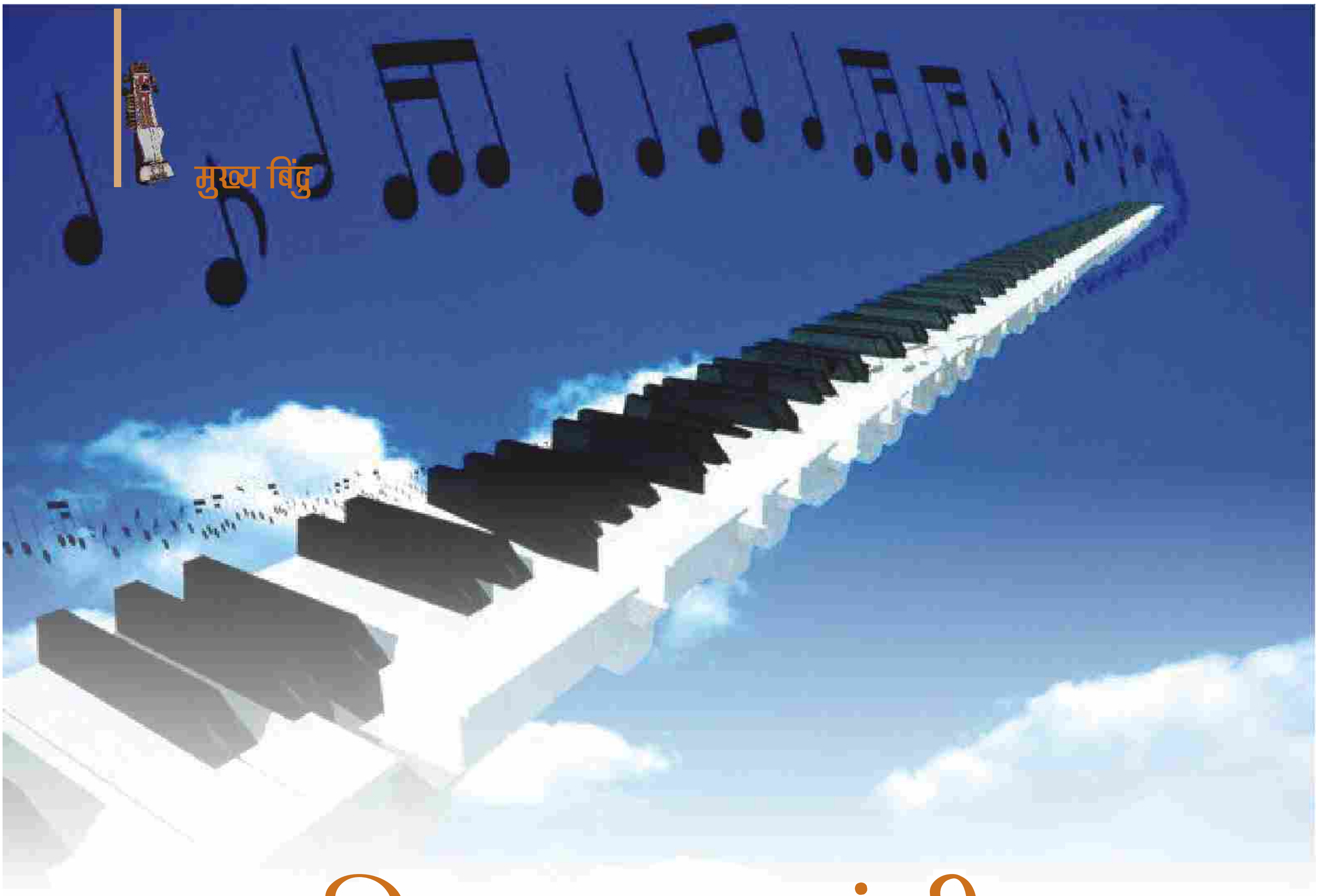

अस्तित्व का संगीत :

एक ओंकार सतनाम

'तेरे असंख्य नाम हैं, तेरे असंख्य स्थान हैं। असंख्य लोक हैं जो अगम्य हैं। असंख्य कहना भी सिर का भार ही बढ़ाना है। अक्षर से ही नाम है, अक्षर से ही स्तुति है। अक्षर से ही ज्ञान और उसकी गुणगाथा के गीत हैं। अक्षर से ही लिखना और वाणी का बोलना है। अक्षर द्वारा ही भाग्य का संयोग है। लेकिन जो लिखता है वह भाग्य के परे है। वह जैसा फर्माता है वैसा हम पाते हैं। जो कुछ भी उसकी रचना है, सब उसका नाम है। नाम बिना कोई स्थान नहीं। कुदरत का किस प्रकार बखान करें? तुझ पर एक बार नहीं, बार-बार निछावर हुआ जाए। जो तुझे भावे वही भला है, तू सदा सलामत और निरंकार है।'

उसके नाम, जितने लोग हैं उतने ही खोज लिए गए हैं। हिंदुओं के पास एक शास्त्र है, विष्णु सहस्रनाम। उस शास्त्र में सिर्फ उसके नाम ही नाम हैं, सहस्र नाम। उसमें कुछ और नहीं लिखा है। सिर्फ नाम ही नाम का शास्त्र है। मुसलमानों के अपने नाम हैं। असल में मुसलमानों की परंपरा यही है कि जो भी नाम मुसलमान किसी का रखते हैं वे सभी नाम परमात्मा के नाम हैं। रहमान हो, रहीम हो? अब्दुल्लाह हो, कुछ भी हो, सभी नाम परमात्मा के हैं। हिंदुओं की भी परंपरा यह थी कि सभी नाम परमात्मा के ही रखे जाएं। तो राम, कृष्ण, हरि...।

अगर हम नामों का हिसाब लगाएं तो जितने लोग हैं उतने ही उसके नाम हैं। और फिर भी उपाय कायम है। हम चाहे जितने और नाम खोज लें। क्योंकि नाम हम देते हैं। उसका कोई नाम नहीं है। नाम हम देते हैं। नाम हमारे द्वारा दिया जाता है। तो हम कोई भी नाम गढ़ लें, वही नाम काम करेगा।

तो नानक कहते हैं, किस नाम को जपूं? किससे तुझे पुकारूं? किस नाम को तू पहचानेगा कि तेरा है? किस नाम से पुकारूं कि मेरी पुकार तुझ तक पहुंच जाएगी? साधक को बड़ी चिंता होती है कि कौन सा नाम ठीक पड़ेगा? क्योंकि यह तो स्वाभाविक है, तुम पत्र लिखते हो तो पता तो लिखना ही पड़ेगा। और पता ध्यान से लिखते हो सब से ज्यादा।

मैंने सुना है, एक आदमी के घर मुल्ला नसरुद्दीन नौकरी करता था। और उस आदमी को गोपनीय पत्र लिखने की झक थी। बिना दस्तखत किए किसी को भी पत्र लिखा करता था। अखबारों के संपादकों को, नेताओं को, ज्ञानियों को। गोपनीय पत्र लिखने का उसको नशा था—रोज!

एक दिन ऐसा हुआ कि एक पत्र उसने लिखा, नसरुद्दीन को दिया। नसरुद्दीन पत्र डाल कर लौटा तो उसने पूछा कि क्या मुल्ला पत्र डाल दिया? नसरुद्दीन ने कहा कि डाल आया। तो उसने कहा कि तुमने बताया क्यों नहीं? क्योंकि मैं पता लिखना भूल गया। तो नसरुद्दीन ने कहा कि मैंने समझा कि शायद इस बार आप पता भी गोपनीय रखना चाहते हैं।

लेकिन अगर पता भी गोपनीय रखोगे तो पत्र पहुंचेगा कैसे? किस पते से भेजें परमात्मा को लिखी पाती कि वह पहुंच जाए? इसलिए नाम की बड़ी तलाश चलती है। कौन सा नाम पुकारें? किस नाम से वह सुनेगा? नानक कहते हैं कि या तो सभी नाम उसी के हैं या कोई भी नाम उसका नहीं है। और अक्षर उसका नाम है।

अक्षर शब्द को समझना बड़ा कीमती है। संस्कृत और भारतीय भाषाओं में हम क ख ग को, वर्णमाला को अक्षर कहते हैं। अल्फाबेट को हम अक्षर कहते हैं। लेकिन अक्षर शब्द का तो अर्थ होता है, जो मिटाया न जा सके। तुम्हारा क ख ग तुम लिखो, वह तो मिटाया जा सकता है। तो वह तो अक्षर नहीं है, क्षर है। तख्ते पर तुमने लिखा क ख ग, पोंछ दो, मिट गया। लिखा था, उसके पहले नहीं था, पोंछ दिया, फिर नहीं हो गया। वह तो क्षर है, अक्षर नहीं है। और हम अल्फाबेट को अक्षर कहते हैं। उसके पीछे कारण हैं। क्योंकि हम कहते हैं, असली जो है, न तो वह लिखा जा सकता है और न पोंछा जा सकता है। तुम जो ऐसा समझो कि आकाश में चांद है और झील में उसका प्रतिबिंब बन रहा है। तुम झील को हिला दो तो झील का चांद फौरन टुकड़े-टुकड़े हो जाता है। वह तो क्षर है। लेकिन तुम ऐसा आकाश में हाथ हिलाओ, उससे कोई आकाश का चांद टुकड़े-टुकड़े नहीं हो जाएगा। वह अक्षर है।

> **तुम कुछ भी मत कहो। कुछ करो; कुछ कहो मत। कुछ हो जाओ, कुछ बोलो मत। तुम्हारे व्यक्तित्व में रूपांतरण हो, तो तुम परमात्मा के निकट आते हो। तुम्हारे पास शब्दों का जाल बढ़ता जाए, उससे तुम परमात्मा के निकट नहीं आते**

हमारी जो भाषा है वह तो परमात्मा की भाषा का केवल प्रतिफलन है। जो हम बोर्ड पर लिखते हैं, किताब में लिखते हैं, वह तो प्रतिफलन है, रिफ्लेक्शन है। वह तो मिट जाएगा। लेकिन जिससे वह आ रहा है, वह अक्षर है। तुम जो बोल रहे हो, वह तो क्षर है, लेकिन तुम्हारे भीतर जो बोल रहा है, वह अक्षर है।

तो नानक कहते हैं, अक्षर ही उसका नाम है। तो उसको न तो लिखा जा सकता है और न मिटाया जा सकता है। उस अक्षर के अतिरिक्त सब आदमी की ईजादें हैं। वह अक्षर क्या है?

उस अक्षर की जो हमारे पास निकटतम प्रतिध्वनि है, वही ओंकार है। इसलिए नानक का यह पूरा का पूरा दर्शन एक भित्ति पर टिका है, एक ओंकार सतनाम। बस! इन तीन शब्दों को तुम समझ लो, तो जपुजी पूरा समझ में आ गया। पूरे नानक ही समझ में आ गए। वह सारसूत्र है। अक्षर यानी ओंकार। क्योंकि वही एक ध्वनि है जो बिना लिखे गूंज रही है। जो कभी नहीं मिटेगी। वह अस्तित्व का ही संगीत है। उसके मिटने का कोई उपाय नहीं। जब सब खो जाएगा, तब भी वह गूंजता रहता है।

बाइबिल में कहा है—और सभी शास्त्रों में उसकी झलक आने ही वाली है—कि सबसे पहले शब्द था, लोगोस। जिसको पश्चिम ने लोगोस कहा है, शब्द कहा है, वही ओंकार है। सबसे पहले शब्द था, फिर सब उससे हुआ। और जब सब खो जाएगा तब भी शब्द होगा। सब उसी में लीन हो जाएगा।

भारत में शब्दयोग की प्रक्रियाएं हैं, जिनमें सिर्फ शब्द को ही साधना होता है। और शब्द का अर्थ है, अपने को तो निःशब्द करना होता है। ताकि जो मैं बोल रहा हूं वह तो चुप हो जाए, और जब मेरा बोलना चुप हो जाता है तब जो सुनायी पड़ता है, वह परमात्मा की वाणी है। वह उसका उद्घोष है। वह उसका उच्चार है।

नानक कहते हैं, असंख्य तेरे नाम हैं, असंख्य तेरे स्थान, अगम्य तेरे लोक। और फिर असंख्य कहना भी सिर का भार बढ़ाना है। नानक कहते हैं, असंख्य कहने से भी क्या सार है?

फिर जब तुम सीख गए ओंकार को, तो विराट सागर में निकल जाना है। फिर यह सारा जगत मंदिर है। फिर तुम जहां भी ओंकार की ध्वनि करोगे, वहीं तुम पाओगे कि चारों तरफ से उसकी वर्षा हो रही है। यह गगन का जो विराट मंडप है, यह इस मंदिर का गुंबज है

असल में हम परमात्मा के संबंध में कुछ भी कहें, उससे सिर का भार बढ़ेगा, घटेगा नहीं। परमात्मा के संबंध में कुछ करें, तो सिर का भार घटेगा। कहें, तो बढ़ेगा। क्योंकि जो भी हम कहेंगे वह मौलिक रूप से गलत होगा।

समझो; एक आदमी कहता है समुद्र के किनारे खड़े होकर कि यह सागर अथाह है। अब इसके दो ही अर्थ हो सकते हैं। एक, या तो इस आदमी ने थाह लेने की कोशिश ही नहीं की, यह किनारे पर भी खड़ा है और यह कह रहा है कि अथाह है। अगर यह किनारे पर ही खड़ा है और इसने थाह लेने की कोशिश नहीं की, तो इसके वचन का क्या अर्थ है? गहरा होगा, बहुत गहरा हो सकता है? पैसिफिक महासागर पांच मील गहरा है, पर अथाह तो नहीं।

तो हम इस आदमी से पूछ सकते हैं कि क्या तुमने थाह लेने की कोशिश की और नहीं पायी? या तुम किनारे पर ही खड़े बातें कर रहे हो? अथाह से तुम्हारा क्या मतलब, बहुत गहरा? बहुत गहरे तो भी अथाह नहीं कहा जा सकता। अथाह का तो मतलब है कि जिसकी गहराई का कोई अंत नहीं।

तो दो ही उपाय हैं। या तो यह आदमी कहे कि मैं तो किनारे पर ही खड़ा हूं, लेकिन बहुत गहरा है। तो हम कहेंगे, तुम गलत शब्द का उपयोग करते हो। या यह भी हो सकता है, यह आदमी कहे कि मैं भीतर गया और थाह न पा सका। तब भी यह सही नहीं है। क्योंकि जहां तक वह गया वहां तक थाह न मिली, एक हाथ और जाता तो थाह मिल जाती। यह इतना ही कह सकता है कि मैं पांच मील तक गया और थाह न मिली, अथाह नहीं कह सकता। और अगर यह कहता है कि मैं पूरा ही गया और थाह न मिली, तब तो बिलकुल ही गलत है। क्योंकि अगर तुम पूरे चले गए तो थाह मिल ही गयी। कुछ बचा नहीं; तो थाह आ गयी।

तो परमात्मा के संबंध में हम क्या कहें—अथाह? तो अगर तुम पूरे परमात्मा को जान लिए हो तभी कह सकते हो। लेकिन तब तो कहना व्यर्थ हो जाएगा। क्योंकि थाह मिल गयी। तुम आखिरी किनारे तक पहुंच गए। या तुम कहते हो कि हम बहुत दूर तक गए, दूर तक गए, लेकिन थाह न मिली। तब भी तुम्हें अथाह नहीं कहना चाहिए। क्योंकि कौन जाने? थोड़ी दूर और जाओ और थाह मिल जाए!

असंख्य कैसे कहोगे? क्या गिनती पूरी कर ली? अगर गिनती पूरी हो गयी तो कितनी ही बड़ी संख्या हो, असंख्य नहीं है। और अगर तुम कहते हो, गिनती अभी पूरी नहीं हुई, करते ही जाते हैं और गिनती पूरी नहीं हुई, तो अभी रुको, वक्तव्य मत दो। क्योंकि कौन जाने, गिनती पूरी हो जाए!

तो परमात्मा को असंख्य कहने से सिर का भार ही बढ़ता है। कुछ हल नहीं होता। अथाह कहो, अनंत कहो, असीम कहो, कुछ फर्क नहीं पड़ता। तुम्हारे सब शब्द व्यर्थ हैं। परमात्मा के संबंध में कुछ भी कहना व्यर्थ है। तुम जो भी कह रहे हो, वह अपने संबंध में कह रहे हो। जो आदमी कहता है, परमात्मा अथाह है, वह यह कह रहा है कि मेरी थाह लेने की सीमा के आगे है। जो आदमी कह रहा है, असंख्य...।

अब असंख्य भी तुम्हारी सीमा पर है। अब तो अलग-अलग जातियों में असंख्य की अलग-अलग धारणाएं हैं। अफ्रीका में कुछ जातियां हैं, जिनके पास बस तीन की गिनती है। एक, दो, बहुत। बस इतनी ही गिनती है। और तीन से ज्यादा असंख्य हो जाता है। क्योंकि अब गिनती हो ही

नहीं सकती तो संख्या के बाहर हो गया। अगर तीन से ज्यादा चीजें रखी हैं तो अफ्रीका का वह कबीला कहेगा, असंख्य। क्योंकि उसकी संख्या ही तीन की है। एक, दो तक ही संख्या है असल में। तीन यानी बहुत। और तीन के पार, जो बहुत से भी ज्यादा है, वह असंख्य।

क्या निश्चित ही परमात्मा असंख्य है? या हमारी गिनती की सीमा आ जाती है? क्या वह अमाप है? या हमारे माप के मापदंड चुक जाते हैं? वह असीम है? या हमारे पैर थक जाते हैं? हम जो भी कहते हैं, अपने बाबत कहते हैं। उसके बाबत में हम कुछ भी नहीं कहते। और अच्छा हो कि अपने ही संबंध में कहें। क्योंकि वह सचाई होगी।

परमात्मा के सामने हम सब तरह से असमर्थ हो जाते हैं। असहाय हो जाते हैं। इस दुनिया में जो भी हमारे ढंग काम करते थे, वहां कोई भी काम नहीं करते। हम एकदम हार जाते हैं, पराजित हो जाते हैं। उस पराजय में हम कहते हैं, असंख्य, असीम, अथाह। लेकिन उससे हम अपने ही संबंध में कह रहे हैं। और उससे हमारा सिर का बोझ ही बढ़ता है। क्योंकि हमें लगता है कि हमने कुछ परमात्मा के संबंध में कहा। परमात्मा के संबंध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। जो भी कहा जा सकता है वह परमात्मा के संबंध में नहीं होगा। उसके संबंध में तो केवल चुप रहा जा सकता है। परम मौन ही उसका संकेत है।

इसलिए नानक कहते हैं, ‘असंख्य कहना ही सिर का भार बढ़ाना है।’

असंख नाव असंख थाव। अगंम अगंम असंख लोअ।।
असंख कहहि सिरि भारु होई।

‘और असंख्य कहने से भी सिर पर भार पड़ता है।’

तुम कुछ भी मत कहो। कुछ करो; कुछ कहो मत। कुछ हो जाओ, कुछ बोलो मत। तुम्हारे व्यक्तित्व में रूपांतरण हो, तो तुम परमात्मा के निकट आते हो। तुम्हारे पास शब्दों का जाल बढ़ता जाए, उससे तुम परमात्मा के निकट नहीं आते।

नानक को स्कूल में भरती किया गया। तो उन्होंने पहला सवाल यह पूछा कि क्या तुम जो पढ़ा रहे हो—पंडित को, शिक्षक को—उसे पढ़ने से मैं परमात्मा को जान लूंगा? पंडित थोड़ा चौंका। क्योंकि छोटे बच्चे से हम ऐसी अपेक्षा नहीं करते। उसने कहा, परमात्मा को? बहुत कुछ जान लोगे, लेकिन परमात्मा को नहीं जान लोगे। तो नानक ने कहा, फिर मुझे वही तरकीब बताएं जिससे परमात्मा को जान लें। बहुत कुछ जान कर क्या करेंगे? उस एक को जानने से सब जान लिया जाता है। नानक ने पूछा कि क्या तुमने जान लिया है उस एक को?

पंडित भी ईमानदार आदमी रहा होगा। वह नानक को घर वापस लौटा गया। उसने नानक के पिता को कहा, क्षमा करें। इस बच्चे को हम कुछ सिखा न सकेंगे। यह पहले से ही सीखा हुआ है। और यह कुछ ऐसे प्रश्न उठा रहा है, जिनके उत्तर मेरे पास नहीं हैं। और यह अवतारी है। यह होनहार है। इसे हम कुछ सिखा नहीं सकते। इससे हम कुछ सीख लें वही बेहतर है।

यह कैसे घटा? इस देश में इसके लिए हमने पुनर्जन्म की एक स्पष्ट रूपरेखा निर्मित की है। यह नानक का शरीर बच्चे का शरीर है, लेकिन यह चेतना बड़ी प्राचीन है। जन्मों-जन्मों में नानक की इस चेतना ने खोज-खोज कर पाया है कि जानने से वह नहीं जाना जाता। शब्दों से उससे कोई संबंध नहीं बनता। मौन होकर ही तुम उसे पाते हो। यह छोटा बच्चा, उसी सनातन खोज को, जो नानक अनेक-अनेक जन्मों में करते रहे हैं, बोल रहा है।

कोई भी बच्चा बिलकुल बच्चा नहीं है। क्योंकि बच्चे की स्लेट भी बिलकुल कोरी नहीं है। अतीत जन्मों में बहुत कुछ लिख कर लाया है। इसलिए बच्चे को भी बहुत सम्मान से देखना। कौन जाने, वह तुमसे ज्यादा जानता हो! क्योंकि तुम्हारी उम्र इस शरीर की भला ज्यादा हो, लेकिन उसके अनुभव की उम्र तुमसे गहरी हो सकती है। इसलिए बच्चे के प्रति भी एक सम्मान रखना। क्योंकि जरूरी नहीं है कि तुम उससे ज्यादा जानते हो। और अनेक बार छोटे-छोटे बच्चे तुम्हें झंझट में डाल देते हैं। क्योंकि ऐसे प्रश्न खड़े कर देते हैं जिनके तुम्हारे पास उत्तर नहीं हैं। लेकिन तुम उन्हें दबा देते हो, क्योंकि तुम ज्यादा शक्तिशाली हो।

नानक को ठीक शिक्षक मिला, जो वापस लौटा गया। क्योंकि उस शिक्षक को एक बात तो साफ हो गयी कि यह जो बच्चा कह रहा है, एकदम ठीक कह रहा है। मैं भी अज्ञानी हूं। और जब मैं सब शास्त्र पढ़ कर ज्ञानी नहीं हो सका तो इस बच्चे को भी उन्हीं शास्त्रों को पढ़ाने से क्या होगा? सिर का बोझ बढ़ता है। एक है, जिसे जानने से सिर का बोझ मिट जाता है। और सब जानने से सिर का बोझ बढ़ता है।

'असंख्य कहना भी सिर का भार बढ़ाना है। अक्षर से ही नाम है।'

अखरी नामु अखरी सालाह।

अक्षर उसका नाम है। ओंकार उसका नाम है। और वही उसकी स्तुति है। तुम कुछ और मत कहो। तुम सिर्फ ओंकार की ध्वनि से भर जाओ, स्तुति शुरू हो गयी। कुछ कहने में अर्थ नहीं है कि मैं पापी हूं, कि मैं पतित हूं, कि तुम पतितपावन हो। घुटने टेकने में, रोने-गिड़गिड़ाने में कुछ भी सार नहीं। इससे कुछ स्तुति नहीं होती।

मनुष्यों ने परमात्मा के संबंध में वैसी ही स्तुतियां बना ली हैं, जैसी हमारे बीच अहंकारी मनुष्य पसंद करते हैं। तुम किसी सम्राट के पास जाओ, घुटने टेक कर गिर जाओ, हाथ जोड़ कर खड़े हो जाओ, और कहो कि आप पतितपावन हैं। वह बड़ा प्रसन्न होता है। तुमने उसी तरह की स्तुतियां परमात्मा के संबंध में बना ली हैं।

नानक कहते हैं, वे स्तुतियां नहीं हैं। क्योंकि परमात्मा कोई अहंकारी तो नहीं है। तुम किसे धोखा दे रहे हो? तुम किसकी खुशामद कर रहे हो? यह मक्खन तुम किसे लगा रहे हो? यह तुम जो परमात्मा का गुणगान कर रहे हो, क्या तुम उसे फुसला कर कुछ काम करवा लेना चाहते हो? यह तुम क्यों कह रहे हो? इसे कहने का क्या प्रयोजन?

नहीं, स्तुति का अर्थ उसकी प्रशंसा नहीं हो सकती। हम क्या उसकी प्रशंसा करेंगे?

इसलिए नानक बार-बार कहते हैं, क्या कुदरत की बात कहें! क्या प्रकृति की बात कहें! क्या उसके विस्मय को शब्द दें! कुछ कहने को नहीं है।

फिर स्तुति का क्या अर्थ होगा? स्तुति का एक ही अर्थ होगा कि तुम अक्षर, ओंकार से भर जाओ। इसलिए ओंकार की ध्वनि के अतिरिक्त न

कोई पूजा है, न कोई पाठ है। हमने मंदिर इस ढंग से बनाए थे कि उनके भीतर अगर तुम ओंकार की ध्वनि करो, तो उनके गोल गुंबज से ध्वनि बरसे वापस तुम पर। इसलिए हम गुंबज गोल बनाते हैं पत्थर का, संगमरमर का मंदिर बनाते हैं, और गूंजने की प्रक्रिया को ध्यान रखते हैं। अगर तुम ठीक से ओंकार का गुंजन करो मंदिर में, तो तुम पाओगे कि ओंकार का गुंजन अनेक गुना हो कर तुम्हारे ऊपर बरसता है।

अभी पश्चिम में एक नयी वैज्ञानिक प्रक्रिया है—बायो-फीडबैक। बड़ी महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। और संभव है कि भविष्य में बहुत काम की सिद्ध होगी। तो उन्होंने छोटे-छोटे यंत्र बनाए हैं, जिन यंत्रों के द्वारा, तुम्हारे मन को शांत करने की व्यवस्था की जाती है। समझने की कोशिश करें।

एक छोटा सा पर्दा सामने होता है। उस पर्दे और तुम्हारे मस्तिष्क को तार से जोड़ दिया जाता है। जब तुम्हारे मस्तिष्क में विचार तेजी से चलते हैं, तो पर्दे पर खास तरह के रंग प्रकट होते हैं। समझो कि लाल धब्बे प्रकट होते हैं। जब मन शांत होता है, तो नीले धब्बे प्रकट होते हैं। जब मन बिलकुल शांत हो जाता है, तो पर्दा खाली हो जाता है।

तो तुम बैठे हो और पर्दे पर देख रहे हो। अभी लाल धब्बे हैं, मन क्रोध से भरा है, बहुत विचारों से भरा है। फिर तुम थोड़े शिथिल हुए। तुमने मन के तनाव को थोड़ा कम किया, नीले धब्बे प्रकट हो गए। तुम प्रफुल्लित हुए—यह बायो-फीडबैक है। क्योंकि अब पर्दे ने तुमको साथ देना शुरू कर दिया। और पर्दे और तुम्हारे बीच अब लेन-देन शुरू हो गया। तुम प्रफुल्लित हुए। और तुम्हें लगा कि किस ढंग से भीतर तुम्हारे घटना घट रही है, जिससे पर्दे पर नीले धब्बे प्रकट हुए हैं। तुम अनुभव कर सकते हो कि सामने पर्दे पर नीले धब्बे हैं और तुम्हारे भीतर मन शांत है। अब तुम और शांत हो सकते हो। धब्बे खो गए। फिर विचार आए, फिर धब्बे प्रगट हुए।

धीरे-धीरे इन दोनों को गौर से अध्ययन करके, तुम अपने भीतर की कला को पकड़ लोगे कि किस भांति धब्बे खो जाते हैं। क्या तुम्हारे भीतर होता है! कैसे तुम्हारा मन शिथिल होता है कि धब्बे खो जाते हैं! तब तुम चेष्टापूर्वक धब्बे खोने में समर्थ हो जाओगे। तुम बैठ जाओगे आंख बंद करके। उसी स्थिति को वापस लाने की कोशिश करोगे, जिसमें धब्बे खो गए थे, पर्दे पर धब्बे खो जाएंगे। तो पर्दे और तुम्हारे बीच एक लेन-देन शुरू हुआ। यह जो बायो-फीडबैक है, इसके छोटे-छोटे यंत्र तैयार हो गए हैं। अनेक तरह के यंत्र हैं। ध्यान के लिए उपयोग में लाए जा रहे हैं पश्चिम में। और कीमती हैं।

लेकिन पूरब ने इसी तरह के बड़े यंत्र विकसित किए थे। तुम ओंकार की ध्वनि करो मंदिर में, वह बायो-फीडबैक है। वह जो गुंबज है, उससे ओंकार की ध्वनि तुम्हारे ऊपर गिरेगी, बरसेगी। तुमने ही पैदा की है, उससे बरसेगी। और जैसे-जैसे तुम्हारी ध्वनि असली ओंकार के करीब पहुंचने लगेगी, वैसे-वैसे मंदिर से बरसने वाली ध्वनि की तीव्रता बढ़ती जाएगी। उसकी सघनता बढ़ती जाएगी। जैसे-जैसे तुम भीतर साज-संगीत

हमने मंदिर इस ढंग से बनाए थे कि उनके भीतर अगर तुम ओंकार की ध्वनि करो, तो उनके गोल गुंबज से ध्वनि बरसे वापस तुम पर। इसलिए हम गुंबज गोल बनाते हैं पत्थर का, संगमरमर का मंदिर बनाते हैं, और गूंजने की प्रक्रिया को ध्यान रखते हैं

में भरने लगोगे, तुम्हारा सुर भीतर सधने लगेगा, जैसे-जैसे तुम्हारा ओंकार वाणी से कम, हृदय से आने लगेगा, वैसे-वैसे तुम पाओगे कि मंदिर से लौट कर आने वाली प्रतिध्वनि की गुणवत्ता बदल गयी। उसकी क्वालिटी बदल गयी। वह अब ज्यादा शांतिदायी है।

जितना हृदय गहरे में उतरेगा तुम्हारा ओंकार, उतनी ही मंदिर की ध्वनि आनंददायी होने लगेगी। पहले तो वह शोरगुल मालूम पड़ेगी, जब तुम उच्चार सिर्फ ओंठ से करोगे। जब तुम्हारा उच्चार हार्दिक होगा तब उसमें एक संगीत प्रकट हो जाएगा, जिसका तुम अनुभव करोगे। और जब तुम्हारा उच्चार परिपूर्ण हो जाएगा—तुम कर ही नहीं रहे हो, अब तुमसे उच्चार हो रहा है—तब तुम पाओगे कि मंदिर के कण-कण से आनंद की वर्षा हो रही है।

और मंदिर तो छोटा प्रतीक है, वहां तो अभ्यास करना है। वह तो तैरना सीखने के लिए नदी के किनारे उथले में इंतजाम किया है। फिर जब तुम सीख गए ओंकार को, तो विराट सागर में निकल जाना है। फिर यह सारा जगत मंदिर है। फिर तुम जहां भी ओंकार की ध्वनि करोगे, वहीं तुम पाओगे कि चारों तरफ से उसकी वर्षा हो रही है। यह गगन का जो विराट मंडप है, यह इस मंदिर का गुंबज है।

नानक कहते हैं, 'अक्षर से ही स्तुति है। अक्षर से ही ज्ञान और उसकी गुणगाथा के गीत हैं। अक्षर से लिखना, अक्षर से वाणी है। अक्षर द्वारा ही भाग्य का संयोग है।'

यह जरा सूक्ष्म है : 'अक्षर द्वारा ही भाग्य का संयोग है।'

अखरा सिरि संजोगु बखाणि।

और जैसे-जैसे तुम्हारे भीतर का अक्षर खुलता है, वैसे-वैसे तुम्हारा भाग्य बदलता है। तुम्हारे भीतर जो कुंजी है जीवन की विधि को बदलने की, वह ओंकार है। जितना तुम ओंकार से दूर निकल जाते हो उतना तुम अपने ही हाथों अपने भाग्य को दुर्गति में डालते हो। जैसे-जैसे तुम्हारा संयोग जुड़ता है भीतर की ध्वनि से, शब्दयोग से, अक्षर से, वैसे-वैसे सुगति शुरू हो जाती है।

ओंकार से दूर निकल जाना नर्क है। ओंकार के करीब आ जाना स्वर्ग है। ओंकार के साथ एक हो जाना मोक्ष है। तो तुम्हारे भाग्य की ये तीन दिशाएं हैं। और कोई उपाय भाग्य को बदलने का नहीं है। तुम कितना ही धन कमाओ! तुम नर्क में हो तो तुम नर्क में ही रहोगे। तुम्हारा नर्क धनी का नर्क होगा। तुम कितना ही बड़ा महल बनाओ! अगर तुम दुखी हो तो तुम महल में दुखी रहोगे। जैसे तुम झोपड़े में दुखी थे, वैसे तुम महल में दुखी रहोगे। झोपड़ा महल बन गया, तुम्हारा दुख न बदलेगा। तुम्हारा भाग्य वही रहेगा। क्योंकि तुम्हारे जीवन की तरंग नहीं बदली। तुम्हारे जीवन की जो ध्वनि-तरंग है, जो भाग्य को लिखती है, वह नहीं बदली।

और दो ही तरह के लोग हैं संसार में। एक, जो स्थितियों को बदलते रहते हैं। कम धन से ज्यादा धन, छोटे पद से बड़ा पद, छोटे मकान से बड़ा मकान, कम सुंदर स्त्री से ज्यादा सुंदर स्त्री; परिस्थिति को बदलते रहते हैं, लेकिन भाग्य की तरंग उनकी वही रहती है। वेव लेंथ वही रहती है उनके भाग्य की। उसमें कोई फर्क नहीं होता।

दूसरा वर्ग है, जिसको हम साधक कहते हैं। वह जीवन की परिस्थिति की चिंता नहीं करता। वह जीवन का जिसे अनुभव हो रहा है, उसकी तरंग को बदलने की कोशिश करता है। जैसे ही वह तरंग बदल जाती है, तो चाहे झोपड़ा हो या महल, तुम महल में होते हो। उस तरंग के बदले हुए मनुष्य को अगर नर्क में भी डाल दो तो भी वह स्वर्ग में होगा। उसको नर्क में डालने का कोई उपाय नहीं है। क्योंकि उसके भीतर जो नाद बज रहा है, वह जिस अहोभाव और आनंद को उपलब्ध हुआ है, तुम उसे छीन नहीं सकते। तुम उसे आग में डाल दो...।

एक झेन फकीर औरत हुई। मरने के पहले उसने अपने शिष्यों को कहा कि मैं जीते जी चिता पर चढ़ना चाहती हूं। यह भी कोई ढंग? कि दूसरे के कंधों पर कोई चढ़ कर और चिता पर जाए! और फिर मैं कभी किसी के कंधे पर नहीं चढ़ी। और मैं नहीं चाहती कि मेरे संबंध में यह कहा जाए बाद में कि मैंने किसी का सहारा लिया। उस एक का सहारा काफी है! अब और किसका सहारा लेना? वह न मानी, तो चिता सजायी गयी। उस चिता पर वह बैठ गयी। चिता में आग लगा दी गयी। लोग दूर भागे, क्योंकि आग तेज थी। पास खड़ा होना मुश्किल था। और एक आदमी ने भीड़ से पूछा कि वहां कैसा लग रहा है? क्योंकि लपटें भयंकर थीं, वह स्त्री जल रही थी। उस स्त्री ने आंखें खोलीं और कहा, इस तरह का मूर्खतापूर्ण सवाल तुम ही कर सकते थे।

उस स्त्री के चेहरे पर वही भाव था जो सदा था। तुम उसे फूलों पर बैठाते तो फर्क न पड़ता। और तुमने उसे आग की चिता पर बिठा दिया तो फर्क नहीं पड़ेगा।

भीतर की तरंग सध गयी तो आग उस तरंग को जला नहीं सकती

छोड़ दो उस पर। एक ही पकड़ छोड़ दो–अपने को पकड़ना। और सब हल हो जाता है। उलझन एक है कि तुम अपनी मान कर चल रहे हो। उलझन एक है कि तुमने खुद को ही अपना गुरु बना लिया है। और सुलझाव भी एक है कि तुम उसे गुरु बना दो और तुम बीच से हट जाओ

और फूल उस तरंग को बढ़ा नहीं सकते। इस भीतर की तरंग को ही नानक कहते हैं, नियति है, भाग्य है। भाग्य तुम्हारे सिर में नहीं लिखा हुआ है। भाग्य तुम्हारे जीवन की तरंग में लिखा हुआ है। और उस तरंग की खोज ओंकार से सधती है।

'अक्षर से लिखना, अक्षर से वाणी बोलना है। अक्षर द्वारा ही भाग्य का संयोग लिखा जाता है। लेकिन जो लिखता है, वह भाग्य के परे है।'

परमात्मा का कोई भाग्य नहीं, कोई नियति नहीं। परमात्मा का कोई प्रयोजन नहीं। परमात्मा का कोई उद्देश्य नहीं। वह भाग्य के परे है। वह कहीं जा नहीं रहा है। वह किसी यात्रा पर नहीं है। वह किसी मंजिल की तलाश में नहीं है।

इसलिए तो हिंदू इसे लीला कहते हैं। लीला का अर्थ है, परमात्मा का कोई प्रयोजन नहीं है। लीला का अर्थ है, परमात्मा खेल रहा है। जैसे छोटे बच्चे खेलते हैं, क्योंकि प्रयोजन नहीं। बस, खेलना ही प्रयोजन है। आनंदित हैं, प्रफुल्लित हैं। जैसे फूल खिलते हैं, किस कारण? जैसे चांद-तारे चलते हैं, किस कारण? जैसे प्रेम होता है, किस कारण? नदी-झरने बहते हैं, किस कारण?

परमात्मा है, कहीं जा नहीं रहा है। और जिस दिन तुम्हारी तरंग सध जाएगी पूरी, तुम भी पाओगे, तुम्हारे जीवन से भी प्रयोजन चला गया। इसलिए तो हम राम और कृष्ण के जीवन को चरित्र नहीं कहते, लीला कहते हैं। वह चरित्र नहीं है, लीला है, खेल है, एक क्रीड़ा है, एक उत्सव है।

'जो लिखता है, वह भाग्य के परे है। वह जैसा फरमाता है तैसा हम पाते हैं। जो कुछ भी उसकी रचना है, सब उसका नाम है।'

इसलिए उसके नाम को क्या खोजना? जो कुछ भी उसकी रचना है, सब उसी का नाम है। वृक्ष में, पौधे में, पत्थर में उसी के हस्ताक्षर हैं।

जीसस ने कहा है, उठाओ पत्थर और तुम मुझे दबा हुआ पाओगे। तोड़ो वृक्ष की शाखा, तुम मुझे छिपा हुआ पाओगे।

सब जगह उसका नाम है। हर ध्वनि में वही गूंज रहा है। सब ध्वनियां ओंकार के ही रूप हैं। उसकी ही सघनता, विरलता के कारण सारी ध्वनियां पैदा होती हैं।

'एक ही छिपा है अनेक में। सब उसका नाम है। नाम बिना कोई स्थान नहीं। कुदरत का किस प्रकार बखान करूं?'

नानक विस्मय से भर-भर जाते हैं। बार-बार अहोभाव और आश्चर्य से भर जाते हैं। कि कैसे कुदरत का बखान करूं? इस स्वभाव का कैसे वर्णन करूं?

'तुम पर एक बार नहीं बार-बार निछावर हुआ जाए तो भी कम है। जो तुझे भावे वही भला, तू सदा सलामत और निरंकार है।'

असंख नाव असंख थाव। अगंम अगंम असंख लोअ।।
असंख कहहि सिरि भारु होई।
अखरी नामु अखरी सालाह। अखरी गिआनु गीत गुण गाह।।
अखरी लिखणु बोलणु वाणि। अखरा सिरि संजोगु बखाणि।
जिनि एहि लिखे तिसु सिर नाहि। जिव फुरमाए तिव तिव पाहि।।
जेता कीता तेता नाउ। विणु नावै नाही को थाउ।।
कुदरति कवण कहा वीचारु। वारिआ न जावा एक बार।।
तो तुधु भावै साई भलीकार। तू सदा सलामति निरंकार।।

छोड़ दो उस पर। एक ही पकड़ छोड़ दो–अपने को पकड़ना। और सब हल हो जाता है। उलझन एक है कि तुम अपनी मान कर चल रहे हो। उलझन एक है कि तुमने खुद को ही अपना गुरु बना लिया है। और सुलझाव भी एक है कि तुम उसे गुरु बना दो और तुम बीच से हट जाओ। और जो हो, तुम निर्णय मत लो कि भला या बुरा। उसकी मर्जी के बिना तो कुछ होगा नहीं। इसलिए जो भी होगा, ठीक होगा। जो उसे भाए वही शुभ है।

– *ओशो*

एक ओंकार सतनाम, आठवां प्रवचन
(पूरा प्रवचन टेप पर भी उपलब्ध है)